सहजो बाई रचित ग्रन्थ 'सहज प्रकाश' का तात्विक विवेचन

✧ **डॉ. कृष्णबीर सिंह**

सहजो बाई (शुक सम्प्रदाय) चरणदासी सम्प्रदाय की प्रमुख आधार स्तम्भ है जबकि चरणदासी सम्प्रदाय के प्रवर्तक 'महाप्रभु श्याम चरणदास जी महाराज' हैं जिन्होंने अपने सम्प्रदाय को 'शुक सम्प्रदाय' के नाम से प्रवर्तन कर आगे बढ़ाया। यदि हम 15वीं विक्रम शताब्दी तक परम्परा भक्ति के प्रचारार्थ सम्प्रदायों को देखें तो हमें रामानुज सम्प्रदाय, विष्णु स्वामी रुद्र सम्प्रदाय, श्री निम्बार्क स्वामी सनकादिक सम्प्रदाय तथा माधवाचार्य सम्प्रदाय आदि चार सम्प्रदाय मुख्यत: दिखाई देते हैं। भाषा एवं प्रचार के आधार पर यदि हम चिन्तन करते हैं तो इन चारों सम्प्रदायों ने अपने दार्शनिक सिद्धान्तों का संस्कृत में व्यवहार किया जो आम जनता के लिए लाभदायक सिद्ध नहीं हुआ। इसी क्रम में सर्वप्रथम इस सम्प्रदाय के युग पुरुष के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर भी संक्षिप्त प्रकाश डालना अनिवार्य है।

मेवात (राजस्थान) क्षेत्र के डेहरा नामक ग्राम में ढूसर भार्गववंशी श्री मुरलीधर एवं श्रीमती कुंजो देवी के घर भाद्रपद शुक्ल तृतीया, मंगलवार, सम्वत् 1760 वि. को एक पुत्र का जन्म हुआ। जिसका मूल नाम 'रणजीत' रखा गया। बालक रणजीत अलौकिक लक्षण वाला था जिसने लगभग चार वर्ष की अवस्था से ही रामधुन का उच्चारण शुद्ध रूप से प्रारम्भ कर दिया था। मान्यता है कि एक दिन बालक रणजीत जब ऐसी ही संकीर्तन प्रक्रिया में रत थे तो व्यास पुत्र शुकदेवजी ने एक बालयोगी के रूप में प्रत्यक्ष उपस्थित होकर उन्हें दर्शन दिया तथा मिठाई से भरा एक दोना प्रसाद रूप में देते हुए कहा–

'बोले बालक तू इस जग में, अति तारन तार कहायेगा।
जो नाम जपेगा नर तेरा, वह यम के द्वार न जायेगा।।'[1]

निस्सन्देह यह एक चमत्कारिक आत्मा थे। आयु के छठे वर्ष में बालक रणजीत को विद्या अध्ययन हेतु डेहरा गाँव की पाठशाला में भेजा गया जहाँ उन्होंने अध्यापक से स्पष्ट रूप में कह दिया–

'आल-जाल तू कहा पढ़ावे, कृष्ण नाम लिख तू क्यों न सिखावे।
जो तुम हरि की भक्ति पढ़ावो, तौ मौकू तुम फेर बुलावो।।'[2]

माता-पिता की तरफ से बालक रणजीत को पढ़ाने की कोशिशें चलती रही लेकिन उसके मन को पाठशाला के स्थान पर साधु-महात्माओं की संगत करना प्रिय लगता था। जब यह बालक 16 वर्ष का हुआ तो अत्यन्त गम्भीरता व दृढ़ता पूर्वक सद्गुरु की खोज में लीन हो गया जो आयु के 19वें वर्ष तक जारी रही। सद्गुरु प्राप्ति हेतु उनकी तीव्र उत्कण्ठा, विह्वलता, दृढ़ता का परिचय इन पंक्तियों से स्वत: ही स्पष्ट हो जाता है–

'दिन नहीं भूख नींद निसि नाहीं। हरि का मिलन सोच मन माहीं।
सूखे होठ बदन रहे पीरा। बिन दरसन मन धरे न धीरा।।[3]

× × ×

रोवत-रोवत पलकैं उड़ गइयाँ। रोम-रोम में सइयाँ-सइयाँ।
दो-दो मास रहे बन माहीं। होहिं व्यतीत रात-दिन ह्वाहीं।।'[4]

संक्षेप में, चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, गुरुवार, प्रतिपदा तिथि, सम्वत् 1779 वि. को जिला मुजफ्फरनगर में स्थित 'मोरना-तीसा' नामक स्थान पर श्री व्यास पुत्र शुकदेव जी ने पुन: प्रकट होकर रणजीत को दीक्षित किया तथा उसे 'श्याम चरणदास' नाम देकर अन्तर्ध्यान हो गये। विधिवत रूप से यहीं से रणजीत अब श्याम चरणदास बन गया था जो अत्यन्त चमत्कारिक भविष्यवक्ता व समदृष्टा समाज सुधारक की निर्मल छवि वाला भी था।

यदि हम सहजोबाई के व्यक्तित्व पर संक्षिप्त विचार करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि सहजोबाई का जन्म दिल्ली के नहर शहादत खाँ के निकट 'परीक्षितपुरा' नामक मोहल्ले में श्री हरिप्रसाद एवं श्रीमती नूपी देवी के घर सम्वत् 1782 विक्रम श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि को हुआ था।[8] श्री हरिप्रसाद जी रिश्ते में चरणदास जी के फूफा लगते थे अत: सहजोबाई एवं चरणदास जी में भाई-बहिन का सम्बन्ध था।

सहजोबाई जब मात्र ग्यारह वर्ष की ही थी तो उसका विवाह सम्पन्न किये जाने का निर्णय लिया गया। विवाह की समस्त तैयारियाँ हो चुकी थीं। सौभाग्यवती स्त्रियाँ सहजोबाई का शृंगार कर रही थीं कि अचानक चरणदास जी वहाँ उपस्थित हो गये, उन्होंने सहजोबाई की ओर देखा और हँसकर कहने लगे–

'सहजो तनिक सुहाग पर, कहा गुदाए शीस,
मरना है रहना नहीं, जाना विस्वे बीस।'[5]

अत्यन्त विकट परिस्थिति उत्पन्न हो गई। एक तरफ दूल्हे सहित बारात बड़ी धूमधाम से आ पहुँची थी और दूसरी तरफ चरणदास ने सहजो के ज्ञान चक्षुओं के पट खोल दिये थे। अद्भुत घटना घटित हुई, अकस्मात बारूद के धड़ाके के साथ वर की घोड़ी बिदक गई और भयाक्रान्त घोड़ी ने वर को एक वृक्ष से टकरा दिया। वर की तत्काल मृत्यु हो गई और सहजोबाई स्वत: ही इस विकट विवाह संकट से मुक्ति पाकर चरणदास की शिष्या बन गई। सहजोबाई के परिप्रेक्ष्य में यदि चरणदासी सम्प्रदाय के वंशवृक्ष को देखें तो ज्ञात होता है कि इसका प्रारम्भ श्री कृष्ण से माना गया है– श्री मन्नारायण (श्रीकृष्णजी), श्री ब्रह्माजी, श्री नारदजी, श्री वेदव्यासजी, श्री शुकदेवजी, श्री चरणदासजी, सहजोबाई।[6]

सहजोबाई को अमृत प्याला मिल गया था जिसे पीकर वह मीराँ की भाँति गुरु पर पूर्णत: न्यौछावर हो गई। कुम्हार बनकर गुरु चरणदास ने भी सहजो रूपी घड़े की ऐसी आकृति गढ़ी कि सहजो अष्टांग योग, नवधा भक्ति एवं योग[7] की पूर्ण ज्ञाता बन गई। अष्टसिद्धि एवं नवनिधि प्राप्त करने के पश्चात् सहजो ने त्रिकालज्ञता प्राप्त की। इनका वर्णन सहजोबाई ने स्वयं अपने ग्रन्थ सहज प्रकाश में किया है–

'सहजो गुरु दीपक दियो, रोम-रोम उजियार।
तीन लोक दृष्टा भई, मिटो भरम अंधियार।।'

विभागाध्यक्ष हिन्दी साहित्य, एस.एस.जी. पारीक (पी.जी.) कॉलेज, जयपुर

सहजोबाई के एकमात्र ग्रन्थ की सूचना एवं प्राप्ति होती है। वैसे तो विभिन्न ग्रन्थों में उनकी स्फूट रचनाओं की भी सूचना प्राप्त होती है लेकिन उनमें अधिकतर वे ही पद प्राप्त होते हैं जो सहज प्रकाश ग्रन्थ में रचित हैं। सहज प्रकाश ग्रन्थ की रचना सम्वत् 1800 वि. में हुई थी जब सहजोबाई की आयु मात्र 18 वर्ष ही थी–

'फाग महीना अष्टमी, सुकल पाख बुधवार।
संवत अठारे सें हुते, सहजो किया विचार।।
गुर अस्तुति के करन कूँ बाढ्यो अधिक हुलास।
होते-होते हो गई पोथी सहज प्रकास।।
दिल्ली सहर सुहावना प्रीछितपुर में बास।
तहाँ समापत ही भई, नवका सहज प्रकास।।'[9]

'सहज प्रकाश' ग्रन्थ जीव, परमात्मा, संसार एवं मोक्ष के गूढ़ रहस्य को अत्यन्त सरलता-सहजता के साथ समझाने का ऐसा सूत्र ग्रन्थ है जो निष्पक्ष भाव से सच्चाई को पटन पर रखकर मूर्ख मनुष्य से प्रश्न करता है कि इस भाँति भ्रमित होने से तेरा ही नुकसान हो रहा है। लगभग आधे ग्रन्थे में गुरु की महिमा, विशेषता आदि के पद हैं जबकि शेष आधे में कर्म और जीवन के विविध पक्षों का सपाट शब्दों में वर्णन किया गया है।

गुरु का महत्त्व–ग्रन्थ में मंगलाचरण परम्परा का निर्वाह करते हुए अलौकिक गुरु श्री शुकदेवजी की चरण वन्दना की गई है, तत् पश्चात् लौकिक गुरु चरणदास की स्तुति करते हुए उन्हें केवट, पारस, चन्दन, मलयागिरि एवं भृंगी आदि की संज्ञा से संज्ञित किया गया है।

गुरु के प्रति श्रद्धा का अन्य उदाहरण हमें आज तक किसी भी ग्रन्थ में दिखाई नहीं देता जैसा सहजोबाई अपने ग्रन्थ सहज प्रकाश में कहती हैं–

'राम तजूँ पै गुरु न बिसारू। गुरु के सम हरि कूँ न निहारू।।'[10]

गजब की बात है! परमात्मा को भी सहजो कह रही है कि मैं गुरु के मुकाबले न रख सकूँगी, इस सिंहासन पर तुम्हें न बिठा सकूँगी। तुम होओगे भले, तुम होओगे सुन्दर, तुम्हीं ने बनाया होगा संसार, माना। लेकिन गुरु के मुकाबले तुम्हें न बिठा सकूँगी। गुरु परम्परा के ऊपर है। यों तो पुरुषों ने भी हिम्मत की है, जो ज्यादा गुरु को परमात्मा के करीब ला सके हैं, उससे ऊपर नहीं ले जा सके। कबीर ने कहा है–**'गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागूं पाय?'** सवाल उठ गया है, किसके पैर छुऊँ, दोनों सामने खड़े हैं! **'बलिहारी गुरु आपकी, गोविन्द दियो बताय'** तो मैं गुरु के पैर लगता हूँ। लेकिन कारण क्या है पैर लगने का? क्योंकि, तुम्हारी बलिहारी तुमने गोविन्द को बता दिया। असली बात तो गोविन्द है। पैर गुरु के लग रहे हैं वे, लेकिन बताने का....। पैर लगने का कारण क्या है? वास्तव में कारण यह है कि तुमने गोविन्द बता दिया वरना तुम्हारे बिना गोविन्द का पता न चलता, इसलिए तुम्हारे पैर छूने पड़ेंगे। क्योंकि तुम साधना हो और गोविन्द साध्य है। यद्यपि पैर तो गुरु के ही छुए लेकिन इशारा साफ कर दिया कि गोविन्द गुरु के ऊपर है। बड़ी होशियारी की कबीर ने। बड़ी राजनीति की। दोनों को राजी कर दिया। लेकिन दो टूक शब्दों में जो बात सहजोबाई ने कह दी उसे कहते हुए कबीर डरेंगे और फरीद थोड़े काँपेंगे।[11]

गुरु की महिमा एवं गुरु के महत्त्व का वर्णन करते हुए सहजोबाई ने कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि सहजो ने ऐसा किसी भाव में भरकर या संवेदनशील होकर अथवा अतिश्योक्ति पूर्ण वर्णन करने की अप्राकृतिक चेष्टा की है अपितु सहजो तो प्रमाण सहित बात करती है, तर्क प्रस्तुत करके प्रश्न पूछती है और ईश्वर तक को चुप करा देती है। यही कारण है कि सपाट ब्यानी में सहजो कबीर से भी आगे खड़ी दिखाई देती है।

जीवन दर्शन–सहज प्रकाश ग्रन्थ की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यही है कि वह जन सामान्य की वास्तविक स्थिति की चर्चा धरातल पर आकर करता है। ग्रन्थ किसी प्रकार का उपदेश या बात मनवाने का उद्योग नहीं करता अपितु वह तो जीव एवं परमात्मा के अन्तः सम्बन्धों का सोदाहरण उल्लेख प्रस्तुत करके मानव समाज में व्याप्त पशुता को नष्ट करके साधुता धारण करने का आह्वान करता है। सहजो ने प्रश्न के साथ उत्तर एवं उत्तर के साथ प्रश्न प्रस्तुत करके सामने वाले को चिन्तन करने पर स्वतः ही बाध्य कर दिया है। यद्यपि हम कबीर वाणी को देखें तो कबीर ने भी जीवन दर्शन के विषय में बहुत कुछ कहा है लेकिन मैं यहाँ यह अवश्य कहना चाहूँगा कि एक तरफ तो प्रौढ़ जुलाहा कबीर है जो भोगे हुए यथार्थ को प्रस्तुत कर रहा है वहीं दूसरी तरफ मात्र अट्ठारह वर्षीय नवयुवती साधिका है जो गुरु कृपा से परम ज्ञान के आधार पर जीवन दर्शन के पृष्ठों को पढ़-पढ़ कर, एक-एक अक्षर का मर्म दुनिया को समझा रही है। यद्यपि आयु का महत्त्व न होते हुए भी महत्त्व मानना पड़ेगा। ओशो कहते हैं सहजोबाई के शब्द कोहिनूर जैसे हैं। अप्रतिम इनका सौन्दर्य है, पर सौन्दर्य सरलता का है इसलिए बुद्धि से तुमने देखा तो समझ में नहीं आयेगा ××× यदि हृदय से देखा तो तुम इस सरलता में ऐसे रहस्य पाओगे जो कभी हल ही नहीं होते। उतरो, डूबो, तुम्हीं खो जाओगे, लेकिन कभी ऐसी घड़ी नहीं आएगी जिस क्षण तुम कह सको जान लिया।[12]

संसार की निस्सारता के विषय में सहजो कहती है–

यही कही गुरुदेव जू, यही पुकारैं सन्त।
सहजो तज या जगत कूँ, तोहि तजैगो अन्त।।

× × ×

झूठा नाता जगत का, झूठा है घर बास।
यह तन झूठा देखकर, सहजो भई उदास।।[13]

अब इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है? तन भी मिथ्या है और संसार भी मिथ्या है। एक मिथ्या दूसरी मिथ्या से बाहें फैला-फैला कर मिल रही है और अवसर पाते ही धोखा दे दिया जाता है। सहजो कहती है मूर्ख प्राणी सत्यता को पहचान और चक्रव्यूह को तोड़कर निकल और अपने बिछोह को समाप्त कर ले। इस मोह माया को चावल पर चढ़े छिलके (धान) की संज्ञा दी गई है–

जब लग चावल धान में, तब लग उपजै आय।
जग छिलके कूँ तजि निकस, मुक्ति रूप ह्वै जाय।।[14]

यहाँ सहजो ने 'तजि निकस' शब्द का प्रयोग किया है जिसमें चेतावनी विवेक और वास्तविकता को पहचानने का आह्वान किया

है। अत्यन्त स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जब कभी हम या कोई व्यक्ति दुविधा में फँस जाता है तो अहसास होने पर हम स्वयं शीघ्रातिशीघ्र उसे छोड़कर दूर चले जाना चाहते हैं अथवा किसी की सहायता करने के उपरान्त यही कहते हैं कि तुरन्त यहाँ से भाग जाओ पुन: इस गन्दगी में पैर न रखना, न इस विषय पर कभी विचार ही करना। मात्र दो अक्षरों में सहजो ने जीवन दर्शन को परिभाषित कर दिया।

हिन्दू धर्म के ग्रन्थों में चौरासी लाख योनियों के विषय में बताया गया है कि इन सबको भुगतने के पश्चात् मानव देह प्राप्त होती है और यदि सद्कर्म न किये तो पुन: उसी चक्र में प्रवेश करना अनिवार्य है। अगले जन्म का आधार कर्म पर निर्धारित है। सहजो इस बात से सहमत है मुक्ति के लिए गुरु भक्ति अनिवार्य है[15]–

पसु पंछी नर सुर असुर जलचर कीट पतंग।
सबही उतपति कर्म की सहजो नाना अंग।।[16]

संसार में सर्वाधिक मोहचक्र परिवार, सगे सम्बन्धियों एवं धन–सम्पत्ति का होता है लेकिन सहजो प्रत्येक मानव को इस अन्धकूप में झाँककर वास्तविकता से परिचित होने का आह्वान कर रही है। स्वार्थ, लालच, कुटिलता, लोलुपता, दंभ आदि से निर्मित इस मिथ्या सांसारिक ढाँचे से रू–ब–रू करवाती हुई सहजो कहती है–

'दरद बटाय सकैं नहीं, मुए न चालें साथ।
सहजो क्योंकर आपने, सब नाते बरबाद।।

× × ×

सहजो जीवत सब सगे, मुए निकट नहिं जायँ।
रोवैं स्वारथ आपने, सुपने देख डरायँ।।

× × ×

काढ़ काढ़ बेगी कहैं, भीतर बाहर लोय।
जीव छुटे सहजो कहै, तन का सगा न कोय।।'

नाहक मिथ्या अहंकार निषेध की चर्चा करते हुए सहजो प्रश्न करती है–क्या ये सब तुम्हारे साथ मृत्यु पश्चात् भी साथ रहेंगी?

यह मन्दिर यह नारि है, यह धन यह सन्तान।
तेरो ना सहजो कहै, काहे करत गुमान।।

सहजो कहती है यह जीवन ऐसा जुआ (खेल) है जिसमें प्राणी की हार निश्चित है किन्तु फिर भी अन्धा प्राणी जुआ खेले जा रहा है। हम रुपये–पैसे, जमीन सम्पत्ति का पूरा–पूरा हिसाब रखते हैं किन्तु वास्तविक श्वांस रूपी खजाने की कभी बात भी नहीं करते। मानव को प्रत्येक वासना से मुक्ति प्राप्त कर लेनी चाहिए अन्यथा वह मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता। और यह तभी सम्भव है जब व्यक्ति गुरु की शरण में पूर्णत: समर्पित भाव से चला जाये।

नाम का महत्त्व–सहजोबाई के दर्शन में सगुण–निर्गुण का एकमकार रूप दिखाई देता है। सर्वोपरि गुरु और फिर 'राम' की चर्चा की गई है। यहाँ पुन: सहजो पर कबीर का प्रभाव दिखाई देता है किन्तु सहजो के राम न तो दशरथ पुत्र हैं, न निराकार हैं अपितु 'ब्रह्म' ही हैं जिसे सहजो प्यार–प्रेम से 'राम' कहकर पुकार रही है।[17]

सहजो के 'राम' हेतु न तो कोई विशेष विधान है, न औपचारिकताएँ हैं एवं न ही उस तक जाने हेतु कोई विशिष्ट पूजा–अर्चना करने की आवश्यकता है। वह तो सोते–जागते, उठते–बैठते, प्रात: सायं, दिन–रात कभी भी याद किया जा सकता है। जो प्राणी उसे चौबीसों घण्टे अपने अन्त:करण में धारण करके स्मरण करता रहता है नि:सन्देह उसे नर्क लोक से मुक्ति प्राप्त हो जाती है–

'सहजो सुमिरन कीजिये, हिरदे माहिं दुराय।
होठ होठ सूँ ना हिलै, सकै नहीं कोइ पाय।।

× × ×

आठ पहर सुमिरन करै, बिसरै ना छिन एक।
अष्टादस और चार में, सहजो यही विवेक।।'

जिसने 'नाम' का रस पी लिया तो फिर वह तुलसी, कबीर, रहीम और मीराँ की भाँति प्रेम दीवाना होकर मस्त हो गया। समस्त सांसारिक रिश्ते–नाते, आडम्बर चकनाचूर हो गये, सब मध्यस्थों का विनाश हो गया, साक्षात् 'राम' के दर्शन जब चाहे कर लिये। न भूख, न प्यास, न भय, न क्रोध, न प्रतिशोध। बस मात्र एक ही लौ जो अन्त:करण में निरन्तर प्रज्ज्वलित होने लगी है जिसके प्रकाश के सहारे दीवाने अपने महबूब के दर्शन कर बतिया लेते हैं–

'प्रेम दीवाने जो भये, नेम धर्म गयो खोय।
सहजो नर–नारी हँसें, वा मन आनँद होय।।'

सहजो ने लोक प्रचलित भाषा में सीधे–सरल ढंग से अपनी बात प्रस्तुत की है। लोगों की मानसिकता एवं विश्वास–मान्यताओं का ख्याल रखते हुए सहजोबाई ने ग्रन्थ की रचना की है। जैसे कि उन्होंने सप्ताह के दिन एवं सोलह तिथियों के माध्यम से आत्मा–परमात्मा और संसार के सम्बन्धों का उद्घाटन किया है।

निस्सन्देह यह कहा जा सकता है कि सहजोबाई को काव्य के साथ संगीत का भी ज्ञान था। उन्होंने विभिन्न गेय पदों की रचना की है जो राग गौरी, सोरठा, मल्हार, बिलावल, काफी, असावरी, बसंत, धनासरी, होरी, ललित, ईमन, रामकली, भैरव, कान्हरा, सारँग, पूरबी, जैजैवंती, परज, कड़रवा आदि में रचित हैं। भाव की दृष्टि से देखें तो सूर एवं मीराँ की छाप अधिक दिखाई देती है।

सहज प्रकाश में दोहा, चौपाई, कुंडलियाँ एवं मिश्रित छंद का प्रयोग किया गया है जिसमें तत्सम, तद्भव के अलावा उर्दू, फारसी, पंजाबी, हरियाणवी एवं राजस्थानी भाषा के शब्दों का बाहुल्य है।

निष्कर्ष–सहजोबाई की जीवनी से ज्ञात होता है कि वह विशिष्ट व्यक्तित्व की धनी थी जिसने तत्कालीन मुगल शासकों के समक्ष अत्यन्त सहज ढंग से अविश्वसनीय चमत्कार भी प्रसंगवश एवं धर्मरक्षार्थ दिखलाये जिसके कारण समस्त जातियों, धर्मों एवं सम्प्रदायों के नर–नारी ही नहीं अपितु शासक वर्ग के सर्वोच्च अधिकारी एवं शासक तक नत–मस्तक हो गये, शरणागत होकर मुक्ति को प्राप्त हुए।

'सहज प्रकाश' ज्ञान का ऐसा महाकाव्य है जिसके प्रत्येक शब्द में शब्द कोष समाहित है। सहजो ने राम, कृष्ण, सगुण, निर्गुण के समस्त भेदों, वर्गों से ऊपर उठकर उस सर्वशक्तिमान महाप्रभू को पहचाना एवं समस्त लोगों को बताने का प्रयास किया जो समस्त सजीव–निर्जीव में व्याप्त है एवं समस्त लोकों, खण्डों का वही एकमात्र

स्वामी है। वह धर्म, जाति, सम्प्रदाय या किसी भी भेद-अभेद से मुक्त है। वह चक्रवर्ती चूडामणि सत्ताधारी है। उसकी सत्ता के समक्ष किसी भी मानव, देव, गण या नाग की सत्ता नहीं है।

सहजोबाई के विषय में एक बात और महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने ग्रन्थ लिख-लिखकर ढेर नहीं लगाये। अपने मात्र इकलौते ग्रन्थ में ही जीव, जगत और परमात्मा के गूढ़ रहस्य का उद्घाटन करके सत्य और असत्य के साक्षात् दर्शन करवा दिये। लोक व्यवहृत भाषा के सीमित शब्दों द्वारा सर्वशक्तिमान 'राम' तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। सहजो कहीं भी भ्रमित या भयाक्रान्त दिखाई नहीं देती है। दृढ़ता एवं दूरदृष्टिता के साथ सम्पूर्ण विश्वास के साथ सहजो आगे बढ़ती प्रतीत होती है। वह चौरासी लाख योनियों के वज्रकोट किले को ध्वस्त करके समस्त जीव जगत को आवागमन से मुक्ति दिलाने हेतु प्रस्तुत है। सहजो का ममत्व प्रत्येक प्राणी को अपने आँचल में समाने हेतु निमन्त्रित कर रहा है।

सहज प्रकाश ग्रन्थ हिन्दू ही नहीं अपितु समस्त मानव जाति के मोक्ष मार्ग को प्रशस्त करने में सहायक है। सहजोबाई जैसे चमत्कारिक सन्त के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को विद्यालयी-विश्वविद्यालयी पुस्तकों में स्थान दिया जाना इसलिए अनिवार्य है कि यह सन्त सम्पूर्ण मानव जाति में प्रेम, सौहार्द्र उत्पन्न करने में सक्षम हैं एवं आज के समय में फैलते सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं आर्थिक-सांस्कृतिक प्रदूषण से बचाने में सहायक हैं।

सन्दर्भ सूची :-

1. लीला सागर ग्रन्थ, पृ. 23
2. गुरु भक्ति प्रकाश ग्रन्थ, पृ. 14
3. लीला सागर ग्रन्थ, पृ. 73
4. गुरु भक्ति प्रकाश ग्रन्थ, पृ. 44-45
5. महन्त घनश्यामदास-भूमिका-सहजप्रकाश, पृ. 16
6. विष्णु नारायण भार्गव-चरणकमल की छाँहि, पृ. 39
7. कैवल्य प्राप्ति, क्लेश उच्छेदन, विवेक प्राप्ति हेतु उक्त प्रक्रिया की अनिवार्यता एवं प्राप्त साधन-अंग आदि के विषय में चरणदासजी ने अपने ग्रन्थों में विस्तृत उल्लेख किया है। वे एक महान् योगी थे। कठिन तपस्या पश्चात् उन्होंने जो ज्ञान प्राप्त किया था वह सहजो को दे दिया।

   अष्टांग योग के क्रमशः निम्न अंग माने गये हैं-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। यह कुल आठ हैं। अब क्रमशः इनमें भी अनेकों अंग हैं-जैसे-**यम** में-काया का योग मुख्य है जबकि इसमें 'अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, क्षमा, धीरज, दया, आर्ज्जव, मिताहार, शौच' आदि आते हैं। इसी भाँति **नियम** में 'तप, सन्तोष, आस्तिकता, दान, पूजा, सिद्धान्त श्रवण, लज्जा, मति, जाप, होम' आदि आते हैं। **आसन** में क्रमशः पद्मासन एवं सिद्धासन आते हैं जबकि **प्राणायाम** में मुख्य रूप से तीन अंग बताये गये हैं-पूरक, कुम्भक एवं रेचक। कुम्भक के पुनः आठ अंग माने गये हैं-सूर्यभेदी, उज्जायी, शीत्कार, शीतली, मस्तिका, मूर्छा, भ्रामरी, प्लावना या केवला। इसी में वायु विचार आता है जिसमें एक ही वायु शरीर के विभिन्न स्थानों पर अनेकानेक नामों से जानी जाती है। कुल मिलाकर 84 वायुएँ बताई गई हैं जिनमें दस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। प्राणायाम के अन्तर्गत ही नाड़ियाँ आती हैं। वैसे तो अष्टांग योगाकार ने नाड़ियों की कुल संख्या 72,864 मानी है जिनका केन्द्र स्थल नाभि होता है। किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नाड़ियों में क्रमशः शंखिनी, किरकल (कृकर), पूषा (पोषा), जस्विनी (यशस्विनी), गान्धारी, हस्तिनी (हस्ति जिह्वा), लम्बका 'अलम्बुषा', पिंगला, इड़ा, सुषुम्ना (ब्रह्मनाड़ी) आदि हैं।

   प्राणायाम में ही कुण्डलिनी शक्ति, चक्र-मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, सहस्रार कमल आदि आते हैं।

   अष्टांग योग में आगे आता है-**प्रत्याहार** इसके बाद **धारणा, ध्यान** जिसमें पदस्थ ध्यान, पिण्डस्थ ध्यान, रूपस्थ ध्यान एवं रूपातीत ध्यान एवं **समाधि** आता है। समाधि के भी विभिन्न अंग माने गये हैं।
8. सहजो बाई - सहज प्रकाश ग्रन्थ - पृ. 41, पद सं. 23
9. सहजो बाई - सहज प्रकाश ग्रन्थ - पृ. 41, चौपाई
10. सहजो बाई - सहज प्रकाश ग्रन्थ, पृ. 3
11. आचार्य ओशो - सन् 1975 में पूना में दिये गये प्रवचन का अंश
12. आचार्य ओशो - बिन घन परत फुहार
13. सहजो बाई - सहज प्रकाश ग्रन्थ, पृ. 16, पद सं. 3 एवं 7
14. उपर्युक्त - उपर्युक्त, पृ. 17, पद सं. 8
15. नौलख जल के जीव बताये। बहुत जन्म इन में भुगताये।।
पंछी जाति कहि दस लाखा। आगू सूँ चलि आई साखा।।
ग्यारह लख कृम कीट लखाऊँ। जिमीं माहिं जो चलत दिखाऊँ।।
बीस लाख थावर बिस्तारा। भरमत-भरमत ही पचि हारा।।
तीस लाख पसु जोनि सुनाया। घनी बार सो पहिरा काया।।
चारहु लाख मनुक्खा देही। लख चौरासी यह सुनि लेती।।
इक-इक बार सबै तुम भयै। कहिये कहा बहुत दुख सहे।।
दुख खे खे करि यह तन पायौ। सहजो हरि गुरु बिना गँवायौ।।
चरनदास गुरु पूरे पाये। चौरासी जम दंड छुटाये।। 109।। पृ. 29
16. उपर्युक्त - उपर्युक्त, पृ. 20, पद सं. 50
17. सहजो बाई - सहज प्रकाश ग्रन्थ, पृ. 39-40
नाम नहीं औ नाम सब, रूप नहीं सब रूप।
सहजो सब कुछ ब्रह्म है, हरि परगर हरि गूप।। 2।।
× × ×
निर्गुण सर्गुण भेद न दोई। आदि अन्त मधि एकहि होई।
गूँगे को सुपनो यह बाता। सहजो कहै कौन के साथा।। 13।।